प्रगतिशील मूल्य और दिनकर

डॉ. मकरन्द भट्ट,

बाबा भगवान दास राजकीय पी.जी. महाविद्यालय, चिमनपुरा, शाहपुरा।

हिन्दी काव्य क्षितिज पर दिनकर का आविर्भाव एक महत्त्वपूर्ण घटना कही जा सकती है, जब छायावादी काव्य आन्दोलन अपने शीर्ष पर था तथा **प्रसाद, पंत, निराला** और **महादेवी** काव्यादर्श के रूप में प्रतिष्ठित हो चले थे, उस समय साहित्यिक वायुमण्डल में छायावादी भावबोध, शिल्प चेतना और भाषिक प्रयोग का एक सुनिश्चित मुहावरा प्रचलित हो चुका था। यह कहना उचित रहेगा कि काव्य रचना के क्षेत्र में एक धुँधलका, एक कुहेलिका चारों तरफ विद्यमान थी। काव्य कौशल के लिए प्रचलित छायावादी छंद विधान और भाषागत चतुराई का प्रयोग करके छायावादी काव्यान्दोलन में काव्य–यशःप्रार्थी नवोदित कवियों के लिए एक सहज रास्ता था, ऐसे समय में अपनी अलग पहचान लेकर रामधारी सिंह दिनकर अपनी कवि प्रतिभा के साथ प्रकट हुए।

यह कहना अधिक उचित रहेगा कि दिनकर ने छायावाद की गतानुगतिकता का उल्लंघन किया, एक ठोस ऐतिहासिक दृष्टि, सांस्कृतिक चेतना एवं प्रगतिशील मूल्यों की ओर दृष्टिपात करके काव्य निर्माण के लिए नवीन विषयवस्तु की प्रस्तावना रखी। इस प्रकार छायावाद की रूढ़ियों को तोड़ने में वे एक महत्त्वपूर्ण रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुये। साहित्य के इतिहास में रामधारीसिंह दिनकर उत्तर छायावादी काव्य विधान में एक महत्त्वपूर्ण साहित्यक प्रतिभा के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनके इस प्रदेय को समझने में दिनकर की प्रगतिशील चेतना का महत्त्वपूर्ण हाथ है। इसी संदर्भ में उनके काव्य विमर्ष को समझा जाना चाहिए–

"मैं प्रचलित रूढ़ राजनीतिक अर्थ में प्रगतिवाद को अपना जीवन दर्शन मानने से इंकार करता हूँ। किन्तु जहाँ तक दासता, साम्राज्यवाद, शोषण और विषमता के विरोध का प्रश्न है, मैंने खुलकर उस विरोध में भाग लिया है और मैं उन सभी लोगों का प्रशंसक हूँ, जो दासता, विषमता, साम्राज्यवाद और सामाजिक न्याय के बारे में लिखते हैं और अपने को प्रगतिवादी कहते हैं।"

इस उदाहरण से स्पष्ट है कि जीवन के प्रति दिनकर का दृष्टिकोंण अत्यन्त सीधा और सरल है, उसमें जटिलता के लिए कोई स्थान नहीं है।

दिनकर की कविता में शोषितों के प्रति गहरी सहानुभूति दिखाई पड़ती है। उन्होंने देश को, समाज को और अपने युग को कल्पना के रंगीन चश्में के बदले यथार्थ के नग्न नेत्रों से देखा है। समाज में **स्त्रियों की नग्नता** और **बच्चों की भूख** दो चीजें ऐसी हैं जो दिनकर के भावुक हृदय को क्रान्ति के लिए सबसे अधिक प्रेरित करती है। भूख और दूध के लिए बच्चों की चिल्लाहट का ऐसा वर्णन किया है जो पत्थर दिल को भी पिघला सकता है। सामाजिक वैषम्य को देखकर ही दिनकर का आक्रोष बरबस फूट पड़ता है। **वीरेश कुमार** का कथन है कि – **"शुरू से अंत तक उनकी पक्षधरता शोषित, पीड़ित जनता के साथ रही।"**[1]

दिनकर का काव्य जीवन की सच्चाई का दस्तावेज है। दिनकर का मत है कि अपनी भाग्यवादी धारणाओं के कारण ही शोषित वर्ग शोषकों का शिकार बनता रहा है। इसलिए उन्होंने **प्रार्थना, वंदना, व्रतादि अनुष्ठान, धार्मिक** और **रूढ़िग्रस्त संस्कारों** को महत्वहीन बताया है।

दिनकर ने **कुरूक्षेत्र** में धर्माचार्यों द्वारा फैलाये गये भाग्यवाद का विरोध किया है –

''भाग्यवाद आवरण पाप का और शस्त्र शोषण का
जिससे रखता दबा एक जन भाग दूसरे जन का
एक मनुज संचित करता है अर्थ पाप के बल से
और भोगता उसे दूसरा भाग्यवाद के छल से।''
(कुरूक्षेत्र)

सामाजिक अनीति के प्रति दिनकर सदैव आवाज बुलन्द करते रहे। जातीयता के आधार पर कर्ण निरन्तर अपमानित और तिरस्कृत होता आ रहा था। उच्चवर्गीय लोग उसकी परम पुरूषार्थ और चरित्र की अवहेलना करते आ रहे थे–**''नर का गुण उज्ज्वल चरित्र है, नहीं वंश–धन–धाम''**। कर्ण के रूप में कवि एक परम पुरूषार्थ और आन्तरिक प्रतिभा से सम्पन्न व्यक्तित्व प्रस्तुत करता है। जिसकी अवमानना महाभारत का एक कारण बनी –

''मैं उनका आदर्श, कहीं जो व्यथा न खेल सकेंगे,
पूछेगा जग, किन्तु पिता का नाम न बोल सकेंगे,
जिनका निखिल विश्व में कोई कहीं न अपना होगा
मन में लिए उमंग जिन्हें चिरकाल कलपना होगा।'' (रश्मिरथी)

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना को ठोस और समग्र अभिव्यक्ति मिली है। राष्ट्रीय भावना से अनुप्रेरित होकर उन्होंने **साम्राज्यवाद** व **विदेशी दासता** का विरोध किया है। बलिदान, संघर्ष और क्रांति के लिए जनता को प्रोत्साहित किया है। इतना ही क्यों दिनकर की **क्रान्तिधर्मिता** तो **हुंकार, करूक्षेत्र** और **परशुराम की प्रतीक्षा** के बाद **जनतंत्र को जन्म** देती है, वहाँ जनता का उल्लास और उत्साह व्यक्त हुआ है :–

''फावड़े और हल राजदंड बनने को हैं।
धूसरता सोने से शृंगार सजाती है।
दो रहा, समय के रथ का घर्घर नाद सुनो
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।''
(जनतंत्र का जन्म)

दिनकर ने कविता को जन साधारण के उपभोग की वस्तु माना है, इसलिए वे मुहावरेदार, सरल और प्रभावशालिनी भाषा लिखने में सफल हुए हैं :–

''रे, रोक युधिष्ठिर को न यहाँ, जाने दे उनको स्वर्ग धीर
पर, फिरा हमें गाण्डीव–गदा लौटा दे, अर्जुन भीम वीर'' (हिमालय)

इस सम्पूर्ण विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वे प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित अवश्य थे, पर रूढ़ अर्थ में कम्युनिस्ट नहीं थे। **रसवंती की भूमिका** में दिनकर ने लिखा है कि **''प्रगति का जो अर्थ मैं समझ पाया हूँ वह साम्यवाद नहीं, बल्कि नवीनता का पर्याय है और उसके दायरे में उन सभी लेखकों का स्थान है जो चर्वित चर्वण पुरातन–विजृम्भन और गतानुगतिकता के खिलाफ हैं।''**[2]

संदर्भ

1. सम्पादन : वीरेश कुमार – रामधारी सिंह दिनकर (संकलित निबंध) पृ. 1 नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया 2007
2. 2. दिनकर – रसवंती पृ. 1 उदयाचल, पटना

Copyright © 2013. *Dr Makarand Bhatt*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.